भारत में लोक नीति निर्माण प्रक्रिया

[PUBLIC POLICY : FORMATION PROCESS IN INDIA]

नीति एक निरन्तर गतिशील रहने वाली अवधारणा है। समय व परिस्थितियों के साथ उद्देश्य बदल जाते हैं और इसके साथ ही उद्देश्य प्राप्ति के लिये नीतियों में परिवर्तन लाना भी स्वाभाविक हो जाता है। नीति-निर्माण के समय बहुत से तत्वों को ध्यान में रखना पड़ता है जैसे कि संविधान के प्राधवान, विधायिका द्वारा निर्मित कानून, प्रशासकीय विधि, न्यायपालिका द्वारा की गई कानूनों की व्याख्या, समाज में प्रचलित प्रथायें व परम्परायें, लोगों के विश्वास, मान्यताएँ आदि। कई बार अन्तर्राष्ट्रीय कानून को भी ध्यान में रखना पड़ता है। इन सभी तत्वों को ध्यान में रखकर निर्मित की गई नीति ही सफल नीति सिद्ध होती है।

सेकलर हडसन के अनुसार नीति-निर्माण एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जिसमें निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना पड़ता है–

(1) नीति का पुनर्निधारण उतना ही आवश्यक होता है जितना कि उसका प्रथम बार निर्माण करना।

(2) नीति-निर्माण में संविधान, विधायी कानून, न्यायपालिका की व्याख्या, प्रथाओं, परम्पराओं आदि तत्वों का भी ध्यान रखा जाता है।

(3) कई बार समाज में कुछ दबाव समूह नीतियों को अपने हितों के अनुकूल ढालने का प्रयास करते हैं। ऐसे में नीतियों का एकीकरण आवश्यक हो जाता है।

नीति-निर्माण की प्रक्रिया पर परिवेश का भी प्रभाव पड़ता है। परिवेश या पर्यावरण में प्राकृतिक संसाधन, भौगोलिक, सामाजिक व आर्थिक स्थिति तथा राजनीतिक संस्कृति को सम्मिलित किया जाता है। इन पर्यावरणीय कारकों में से नीति-निर्माण पर राजनीतिक संस्कृति तथा सामाजिक व आर्थिक कारकों का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। राजनीति संस्कृति में सरकारी नीतियों व कार्रवाइयों से सम्बन्धित विश्वासों को सम्मिलित किया जाता है। विद्वानों ने तीन प्रकार की राजनीतिक संस्कृति बताई है–संकीर्ण, अधीनस्थ एवं सहगामी।

संकीर्ण राजनीतिक संस्कृति में नागरिकों की राजनीतिक भागीदारी नगण्य होती है क्योंकि उन्हें इस सम्बन्ध में कोई जानकारी नहीं होती है।

अधीनस्थ राजनीतिक संस्कृति में सरकारी प्राधिकार के प्रति जागरूकता होती है अपने कुछ राजनीतिक विचार भी होते हैं किन्तु भागीदारी बहुत कम होती है।

सहगामी राजनीतिक संस्कृति में नागरिकों में उच्च राजनीतिक जागरूकता होती है और इसके परिणामस्वरूप राजनीति में सार्थक नागरिक सहभागिता भी पाई जाती है।

यह स्पष्ट है कि संकीर्ण राजनीतिक संस्कृति नीति-निर्माण को सबसे कम तथा सहगामी राजनीतिक संस्कृति सबसे अधिक प्रभावित करती है। किसी भी देश या राज्य में विभिन्न सामाजिक व आर्थिक समूह होते हैं। इनके हित एक-दूसरे से भिन्न तथा कई बार परस्पर विरोधी होते हैं। ऐसे में विरोधी हितों को संरक्षण देने वाली नीति का निर्माण एक चुनौती पूर्ण कार्य है। इस प्रकार नीति-निर्माण पर विभिन्न कारकों का प्रभाव पड़ता है। अत: नीति- निर्माण की प्रक्रिया सदैव से सहकारी प्रयत्नों का परिणाम रही है।

प्रशासन में नीति-निर्माण की प्रासंगिकता

(RELEVANCE OF POLICY-MAKING IN ADMINISTRATION)

किसी भी कार्य को करने का एक उद्देश्य होता है और उस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये कार्य किस प्रकार किया जाना चाहिये; किन नियमों का पालन किया जाना चाहिये; किन चरणों से गुजर कर प्रक्रिया को पूर्ण

करना चाहिये आदि बातें नीति-निर्धारण के अन्तर्गत ही आती हैं। इसी प्रकार प्रशासनिक क्षेत्र में भी लोक हित से सम्बन्धित बहुत से लक्ष्य होते हैं जिनकी प्राप्ति के लिये नीति-निर्माण किया जाना न केवल अपेक्षित वरन् प्रासांगकि भी है। लोक प्रशासन में निति-निर्माण का सर्वोपरि महत्व है। नीति-निर्धारण के द्वारा प्रशासन के कार्य निर्धारित किये जाते हैं जिनको सम्पन्न करके लक्ष्य तक पहुँचा जा सकता है।

यद्यपि परम्परागत प्रशासन के अन्तर्गत नीति-निर्माण व प्रशासन के बीच विभाजन रेखा को स्वीकार किया गया था। इसके समर्थक वुडरो विल्सन, गुडरो तथा एल. डी. ह्वाइट थे। किन्तु शनैः-शनै, यह विचारधारा क्षीण होने लगी तथा वर्तमान में यह माना जाने लगा है कि प्रशासन व नीति निरूपण को दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता है। सर्वप्रथम इस विचार का समर्थन लूथर गुलिक ने किया।

एपिलबी (Appleby) के अनुसार, "प्रशासन निरन्तर भविष्य के लिये नियम बनाता है। प्रशासक ही सदैव यह निर्धारित करते रहे कि कानून क्या है, कार्यवाही के रूप में इसका क्या अर्थ है।" इसके अतिरिक्त प्रशासक कानून निर्माण के लिये सिफारिश भी कर सकते हैं।

प्रशासकों की नीति-निर्माण में सहभागिता को निम्नलिखित आधारों पर समझा जा सकता है—

(1) सामान्यतया देखा गया है कि विद्यायक अथवा मंत्री लोकप्रियता के कारण या अन्य प्रभावों के द्वारा पद प्राप्त कर लेते हैं किन्तु उनमें प्रशासकीय अनुभव का अभाव होता है। ऐसे में उन्हें विधि-निर्माण के कार्य में प्रशासकों की सहायता लेनी पड़ती है।

(2) प्रशासन निरन्तर जनता के सम्पर्क में रहता है। अतः राजनीतिज्ञों की अपेक्षा प्रशासक जनता की समस्याओं को कहीं अधिक अच्छी प्रकार से समझ पाते हैं। यही कारण है कि अक्सर प्रशासकों द्वारा ही नीति-निर्माण से सम्बन्धित प्रस्ताव रखे जाते हैं।

(3) नीति-निर्माण का कार्य सैद्धान्तिक दृष्टि से विधायकों का होता है। कुछ नीतियाँ आदर्श प्रतीत होती हैं किन्तु उनके क्रियान्वयन में बहुत-सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। प्रशासन इन समस्याओं से भली भाँति परिचित होता है अतः प्रशासन कानून में आवश्यक संशोधन की माँग कर सकता है।

(4) निरन्तर बढ़ते दायित्वों के कारण तथा परिस्थितियों की जटिलता के कारण विधानमंडल अक्सर कानून का प्रारम्भिक भसौदा तैयार करने के बाद शेष जिम्मेदारी प्रशासन को सौंप देता है। प्रशासन ही उसे अंतिम रूप प्रदान करता है तथा कानून को क्रियान्वित करने की जिम्मेदारी भी प्रशासन की होती है।

नीति-निर्माण के क्षेत्र में प्रशासकों की इस सहभागिता से ही लोक प्रशासन में नीति-निर्माण की प्रासंगिकता सिद्ध हो जाती है।

भारत के समाज में बहुत-सी समस्यायें व्याप्त हैं जैसे कि निर्धरता, निरक्षरता, रोगग्रस्तता, ऊर्जा की कमी, जातिवाद, साम्प्रदायिकता, भाषावाद, सामाजिक व आर्थिक असमानता, भ्रष्टाचार, कमजोर व पिछड़े वर्गों का शोषण, राजनीतिक जागरूकता का अभाव आदि। इन समस्याओं के निराकरण हेतु सही व उपयुक्त नीतियों का निर्माण किया जाना चाहिये। किन्तु लोक नीति के प्रति समुचित ज्ञान का अभाव होने के कारण ऐसा सम्भव नहीं हो पाता है। इसलिये समाज में हताशा व निराशा बनी रहती है। लोक नीति का विभिन्न दृष्टिकोण से व्यापक अध्ययन करने के बाद ही उसे उचित तरीके से लागू किया जा सकता है तथा जनता लाभान्वित हो सकती है।

संयुक्त राज्य अमेरिका में लोक नीति को वहाँ के विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया गया है। वहाँ विशेष प्रक्रिया का अनुसरण करके नीति-निर्माण किया जाता है तथा नीति-क्रियान्वयन में भी भारी धनराशि व्यय की जाती है। वहाँ की जनता आश्वस्त रहती है कि सरकार द्वारा उचित नीतियाँ अपनाकार उनकी समस्याओं का समाधान किया जायेगा। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि हमारे देश में यह व्यवस्था नहीं के बराबर है। लोक नीति से सम्बन्धित बहुत कम साहित्य उपलब्ध है। हमारे संविधान के अन्तर्गत संघीय प्रणाली के तहत केन्द्र व राज्यों के मध्य शक्तियों का विभाजन किया गया है किन्तु लोक नीति के सम्बन्ध में कुछ स्पष्ट विभाजन नहीं है। इसके अतिरिक्त जिन विषयों का विभाजन किया गया है उनके सम्बन्ध में भी अक्सर विवाद की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसका कारण यह है कि कुछ विषयों के विभाजन के सम्बन्ध में अस्पष्टता है।

देश में दीर्घ काल से चली आ रही राजनीतिक अस्थिरता इस ओर संकेत करती है कि राजनीतिक स्थायित्व लाने के लिये प्रशासनिक स्तर पर निष्पक्ष रूप से नीति-निर्माण किया जाये। देश की अस्थिर व